समकालीन कहानी और उपेक्षित समाज

डॉ. प्रेम सिंह
डॉ. रिम्पी खिल्लन

समकालीन कहानी

और

उपेक्षित समाज

डॉ. प्रेम सिंह

डॉ. रिम्पी खिल्लन

अनुक्रम

भूमिका	3
उपेक्षा	9
सामाजिक समस्याएँ	59
समकालीन कहानी और पूर्ववर्ती कहानी के उपेक्षित समाज में अंतर	113
समकालीन कहानी और बच्चों की उपेक्षा	148
समकालीन कहानी और नारी की उपेक्षा	194
समकालीन कहानी और वृद्धों की उपेक्षा	236
समकालीन कहानी और बीमारों की उपेक्षा	283
समकालीन कहानी और दलित वर्ग की उपेक्षा	326
समकालीन कहानी और विकलांग पात्रों की उपेक्षा	366
उपेक्षित समाज की भाषिक दुनिया और समकालीन हिन्दी कहानी	418
भविष्य की दुनिया और उपेक्षित समाज	453

भूमिका

हाशिये और केन्द्र का संबंध अत्यंत जटिल है क्योंकि जिसे केन्द्र मान लिया जाता है वही यह तय करता है कि हाशिया क्या होगा परन्तु केन्द्र के प्रति दृष्टिकोण बदलते ही हाशिये के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन आ जाना भी अवश्यंभावी है। अधिकतर केन्द्र ही हाशिये के लिए मानदंड तय करता है और हाशिये की अपनी आवश्यकताओं, दृष्टिकोण व जीवन प्रणाली की उपेक्षा कर देता है। केन्द्र का यह पूर्वाग्रह अत्यंत प्रबल होता है कि उसके बनाये मानदंडों को अपना लेने में ही हाशिये पर खड़े लोगों की भलाई है क्योंकि उपेक्षित समाज की अपनी सोच-समझ व जीवनशैली मुख्यधारा के लोगों की सोच-समझ और जीवनशैली से कमतर है। इस प्रकार हाशिये और केन्द्र के कटघरे सदैव पूर्वाग्रहों से ग्रस्त होते हैं। इसलिए इनकी सूक्ष्म पड़ताल कम ही हो पाती है। आज वो पीदृश्य में जहाँ किसी भी वस्तु का कोई केन्द्र नहीं है और संरचनाएँ टूट रहीं हैं, ध्वस्त हो रहीं हैं तथा शक्ति का निरन्तर विकेन्द्रीकरण हुआ है। ऐसे तेजी से गतिशील परिदृश्य में 'उपेक्षा' जैसे सहज से दिखने वाले शब्द का अर्थ और भी अधिक जटिल रूप ग्रहण कर लेता है क्योंकि यह बता पाना अत्यंत कठिन होता जा रहा है कि वास्तव में उत्पीड़क कौन है और उत्पीड़न जिसका हो रहा है? ऐसे में छद्म उपेक्षा दर्शा कर कोई वास्तविक रूप में सबल व्यक्ति भी अपने प्रति आसानी से

संवदेनशीलता अर्जित कर सकता है। दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष यह भी है कि एक वार शक्ति अर्जित कर लेने के पश्चात् उत्पीड़ित व्यक्ति भी उत्पीड़क की भूमिका में आ जाता है और यहीं से उपेक्षा का दुष्चक्र (Vicious Circle) घूमने लगता है जिससे बाहर निकलने का फिर कोई रास्ता, कोई उपाय नहीं रहता।

स्थिति इतनी गंभीर हो जाती है कि कभी खुद शोषित होने वाला व्यक्ति भी शक्ति का थोड़ा सा अंश अर्जित करते ही अपने से दुर्बल व्यक्ति को दबाने लगता है। ऐसे में चीज़ों को सरलीकृत करके देखना और भी अधिक समस्याओं व कठिनाइयों को जन्म देता है। इसलिए उपेक्षा के जटिल स्वरूप को अवधारणात्मक स्तर पर समझे जाने की आवश्यकता है साथ ही साथ स्त्रियों, दलितों, बच्चों, वृद्धों, विकलांगों और बीमारों की समस्याओं को भी पहले अवधारणात्मक स्तर पर समझाने की जरूरत है। स्त्रियों की समस्याओं को जैविक ऐतिहासिक व सामाजिक स्तर पर देखे जाने के साथ-साथ नितांत निजी परिवेश भी रखकर देखा जाना चाहिए। इसी तरह दलितों की समस्याओं को भी केवल जाति के स्तर पर ही नहीं अपितु वर्ग के स्तर पर भी और आरक्षण से जुड़ी कमजोरियों के स्तर पर समझने का प्रयत्न किया जाना नितांत आवश्यक है।

बच्चों की कठिनाइयों को इस स्तर पर समझने की जरूरत है कि वे केवल अपने अभिभावकों का उपनिवेश मात्र नहीं हैं और उनकी आवश्यकताओं का दायरा

वयस्कों की इच्छाओं द्वारा निर्धारित नहीं होना चाहिए अपितु बचपन की सहजता व निश्छलता को भी संरक्षित किये जाने का प्रयास आवश्यक है। वृद्धों की समस्याओं को भी वृद्धावस्था संबंधी कठिनाइयों और उनकी स्वयं की रूढ़ हो गयी मानसिकता के साथ उनके संबंधों पर भी प्रकाश डाला जा सके। विकलांगता को भी केवल एक व्यक्तिगत समस्या के रूप में ही नहीं अपितु एक सामाजिक संरचना के रूप में देखना-समझना जरूरी है और इस बात पर बल दिये जाने की आवश्यकता है कि प्रत्येक व्यक्ति किसी एक या दूसरी स्थिति में स्वयं को अक्षम पाता है इसलिए यह कहना एकतरफा फैसला करने जैसा होगा कि विकलांग लोग समाज पर बोझ हैं और वे समाज में अपना स्थान नहीं बना सकते। विकलांगता के लैंगिक संदर्भ की भी सूक्ष्म पड़ताल आवश्यक है क्योंकि भ्रूण परीक्षण द्वारा जब सामान्य लड़कियों का ही गर्भपात का प्रतिशत इतना अधिक है तो ऐसे में विकलांग लड़कियों की स्थिति क्या होगी। उन पर शोषण की दोहरी मार का विश्लेषण जरूरी है।

बीमारों के संबंध में तो स्थिति और भी अधिक गंभीर हो जाती है क्योंकि जीव विज्ञान या चिकित्सा विज्ञान के बाहर समाज विज्ञान के स्तर पर और भावनात्मक स्तर पर उनके बारे में काम करने की जरूरत को पहले कभी गंभीरता से नहीं लिया गया। आज जब लगातार आधुनिक जीवन की बढ़ती जटिलताओं के कारण तनाव बढ़ा है तब इस बारे में नये सिरे से सोचा जा रहा है। बीमारी भी केवल शरीर की ही नहीं

अपितु मन की भी होती है और उपेक्षित व्यक्ति शरीर के साथ-साथ मन से भी रोगी होता है। बहुत बार मानसिक पीड़ा इतनी बढ़ जाती है कि वह इच्छा-मृत्यु के मांग करने लगता है। बीमारी भी एक सामाजिक संरचना (Social Construct) है क्योंकि बीमार के संबंधी भी इसमें उपेक्षित होते हैं, पीड़ा पाते हैं और ऐसी स्थिति में रोगी की अवहेलना करने लगते हैं।

इस प्रकार इस पुस्तक में हमने समाज से जुड़े उपेक्षित लोगों की पीड़ा को अवधारणात्मक व भावनात्मक दोनों ही स्तरों पर देखने व समझने का प्रयास किया है। भावनात्मक पक्ष को उभारने का माध्यम हिंदी कहानी बनी है। समकालीन हिंदी कहानी अपने जटिल परिवेश व परिस्थितियों के बीच से विकसित हुई कहानी है। इसमें अपने समय की समस्याओं व कठिनाइयों से साक्षात्कार करने की क्षमता है। इसमें वर्तमान की सतह के भीतर झांककर भविष्य के पार तक देखने का प्रयास किया गया है। वर्तमान समय में जब पूर्ववर्ती जीवन मूल्यों का ह्रास हुआ है। व्यक्ति अपने आस-पास के परिवेश को लेकर संवेदनहीन हुआ है। वह न केवल दूसरों की उपेक्षा करता है अपितु स्वयं भी उपेक्षित हुआ है। कुल मिलाकर मानवता व मानवीय भावनाएँ ही हाशिये पर आ गयी हैं। ऐसे में समकालीन कहानी का दायित्व और भी अधिक बढ़ा है। समकालीन कहानी ने इस दायित्व को निभाने का भरसक प्रयास किया है। समकालीन और पूर्ववर्ती कहानी के उपेक्षित समाज में आया अंतर इसका सशक्त